२. समकालीन कहानी का विकास : विभिन्न आन्दोलन एवं प्रवृत्तियाँ

समकालीन कहानी के विकास का ऐतिहसिक, सांस्कृतिक परिदृश्य विगत पाँच दशकों का हैं ; जिसमें विभिन्न कहानी आन्दोलनों का विकास कमोबेश रूप से हुआ हैं। **नयी कहानी** आन्दोलन का विकास लगभग दो दशकों तक परिव्याप्त रहा है तो **अकहानी** आन्दोलन लगभग सातवें और आठवें दशक में चर्चित रहा हैं। लगभग यही स्थिति 'नई कहानियाँ' पत्रिका के पश्चात कमलेश्वर की 'सारिका' पत्रिका से जारी **'समान्तर कहानी'** आन्दोलन की रही हैं। जनवादी लेखक संघ (1982) की स्थापना से पुनः नवप्रगतिशील सोच और वामपंथी चेतना की रचनाएँ सामने आयी हैं। सुधी पाठक जानते हैं कि विगत दो दशकों से **'स्त्री विमर्श'** और **'दलित विमर्श'** ने नया रूप अपनाया हैं।

2.1 समकालीन कहानी की पृष्ठभूमि

कहानी के सम्पूर्ण बोध के लिए पारम्परिक कहानी के स्त्रोत की खोज की गई। इस प्रक्रिया में कहानी को पंचतंत्र, हितोपदेश, जातक-कथा की कहानियों से जोड़ा गया और कभी ऋग्वेद के संवाद-सूक्तों, उपनिषदों की रूपक कथाओं, रामायण और महाभारत के उपाख्यनों से जोड़ते हुए कहानी

विकास की समीक्षा भी की गयी। लोक कथाओ और पंचतंत्र तथा बोस्ता वर्ग की कहानियों की प्रभावशाली रचना और व्यक्तित्व को तो इस सीमा तक प्रदर्शित किया गया हैं ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो संपूर्ण विश्व के कथाबोध का जन्म इन्हीं से हुआ हो इन कथाओं में विलक्षण कल्पना, चमत्कार, जिज्ञासा, संघर्ष, जय-विजय का चित्रण,घटना-जाल,धार्मिक आस्था, मान्यताएँ, छल-कपट,तथा सामाजिक और व्यक्ति स्वातंत्रय के ऐसे सूक्ष्म बिन्दु लक्षित किये जा सकते हैं जो कहानी प्रकृति की ओर संकेत करते हैं। संभवतः इसी कारणवश कहानी का पाठक जिस कहानी से जुडा है,वह भारतीय एवं विदेशी संस्कृति का जोड हैं।[1] उन्नीसवीं शताब्दी का प्रारंभ इस दृष्टि से हिन्दी कहानी की विकास-यात्रा के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक कहानीकारों ने एक ओर भारतीय कथा-परम्परा (पंचतंत्र हितोपदेश) का पारायण किया और दूसरी ओर यूरोपीयन कथाशैली का भी अध्ययन किया। प्रस्तुत संदर्भ में धनंजय वर्मा का मत रहा हैं कि बीसवीं शताब्दी की शुरूआत में पश्चिम में आधुनिक कहानी ने लगभग एक शताब्दी की यात्रा सम्पन्न कर ली थीं। उसके अनेक रूप और परिभाषाएँ बन और टूट चुकी थीं। अंग्रेज के ओ हेनरी, फ्रांस के मोपासाँ और रूस के चेखव- ये तीन कालजयी कहानीकार कहानी को आधुनिक रूप प्रदान कर चुके थे। [2]

प्रेमचंद ,जैनेन्द्र, और अज्ञेय विश्व कथा साहित्य के सजग पाठक रहे है और यही हश्र रांगेय राघव, यशपाल और निर्मल वर्मा का हैं। इसी कारण समकालीन कहानी की पृष्ठभूमि में हमें एक ओर विश्व-कथा साहित्य की श्रेष्ठ रचनाओं के परोक्ष प्रभाव के कारण यथार्थ-वादी मनोविश्लेषण वादी और अस्तित्ववादी कहानियाँ उपलब्ध होती हैं। पर अधिकांश कहानियाँ- ब्रिटिश पूँजीवाद और भारतीय स्वातंत्र्य संघर्ष के दौरान उपजी सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर की कहानियाँ भी हैं।

स्वातंत्र्य संघर्ष के दौरान देशभक्ति ,साहस, वीरता, शौर्य और बलिदान की कहानियाँ प्रेमचंद, माखनलाल चतुर्वेदी, विश्वम्भरनाथ कौशिक, यशपाल, भैरवप्रसाद गुप्त के यहाँ मिलती हैं। प्रेमचंद ने साहित्य जगत में आते ही कल्पना को यथार्थवाद की ओर उन्मुख कर दिया। परिणामस्वरूप दैनिक जीवन की घटनाओं पर कहानियाँ लिखी जाने लगी। देखे-सुने पात्र आये और कहानी में लेखक का अनुभव और वातावरण अभिव्यक्ति पाने लगा। कहानियाँ व्यक्ति-विशेष से प्रभावित होकर लिखी जाने लगी। कहानियों का आधार निजी अनुभव होने लगा।[3] प्रेमचंद कलाकार की तटस्थता में विश्वास नहीं रखते थे। वे जनता के सुख-दुख में भाग लेने वाले कलाकार थे।[4] इसी कारण प्रेमचंद की कहानियाँ अपने सामाजिक परिवेश से जुड़ी हुई हैं। उनकी कहानियों के माध्यम से पाठक भारतीय जीवन के सभी पक्षों से परिचित हो जाता है। कृषकों की समस्याएँ, विधवा समस्या, जाति, धर्म, परंपराएँ, संयुक्त परिवारों में विघटन अछूतोध्दार, जातीय एकता, साम्प्रदायिकता, औद्योगीकरण, आजादी की लड़ाई आदि अनेक ऐसे विषय है

जो प्रेमचंद की कहानी के विषय बने हैं। छोटे-से छोटे सामाजिक प्रसंग उनकी निगाह से नहीं छूट पाए । बिरले ही लोग समाज की ऐसी पहचान रख पाते हैं।

भारतीय समाज का ऐसा कोई पक्ष नहीं जो प्रेमचंद की दृष्टि से परे रह गया हो। उनकी कहानियाँ लोकतांत्रिक समाज व्यवस्था के आरम्भिक संकेत देती हैं। प्रेमचंद की कहानियाँ उस व्यक्ति की ओर भी संकेत करती है जो एक खास किस्म की सामाजिकता से युक्त है और समय - समय पर अपने वर्ग का करता हैं। प्रेमचंद की पैनी दृष्टि संभवतः तम चीर कर देखने की क्षमता रखती है। समाज का कोई भी प्रसंग उनकी दृष्टि से अछूता नहीं बच पाया। जीवन के वे पक्ष जिनकी ओर बडे-बडे आधुनिक कथाकार नहीं देख पाये। प्रेमचंद की दृष्टि ने उन्हें भी बड़ी ही बारीकी से अनुभव किया एवं अपने साहित्य में स्थान दिया। लोक मानस का ऐसा कथाकार निश्चित ही युग दृष्टा हैं।

कहना न होगा कि प्रेमचंद ,विश्वम्भनाथ कौशिक(रानी सारंधा,ताई) को नारी मनोविश्लेषण का गहरा आभास रहा हैं। प्रेमचंद युग में नारी का परिवेश उसकी विविधवर्णी भूमिकाओं को लेकर आया। उनकी परवर्ती कहानियाँ अवश्य ही आदर्शो के आतंक से मुक्त नितांत मनोवैज्ञानिक तथ्य पर आधारित, मानवीय व्यवहारों से युक्त रही। प्रेमचंदोत्तर युग की कहानी यथार्थ की मनोवैज्ञानिक भूमि पर उतर कर नारी के परिवेश और उसकी निजी अनुभूति स्तर पर घटित प्रतिक्रिया को अभिव्यक्त करती हैं। निरन्तर घटनेवाली घटनाओं ने आज के नारी पुरूष को इतना आत्मचेता एवं आत्म सजग बना दिया कि इसकी प्रतिक्रिया अनेक दिशाओं में परिलक्षित हुई।[5]

समकालीन हिन्दी कहानी की पृष्ठभूमि में नई कहानी आन्दोलन के पूर्व की प्रगतिशील कहानियाँ व सामाजिक सुधार की कहानियों की भी विवादस्पद भूमिका रही हैं। वैसे प्रेमचंद के बाद जो मात्वपूर्ण कहानीकार हिन्दी जगत में अपनी नई प्रवृत्तियों के साथ प्रकाशमान हुए, यथाः जैनेद्र, अज्ञेय, यशपाल, इलाचंद्र जोशी और उपेन्द्रनाथ 'अश्क' आदि। ये सब के सब विदेशी कथा साहित्य,उसकी कला परंपरा से पूर्ण परिचित तथा बंगला और उर्दू की कहानी कला के शान के साथ पूर्ण सजग और गंभीरता के साथ हिन्दी कहानी क्षेत्र में अवतरित हुए थे।[6]

पारम्परिक आलोचक और अनुसंधान कर्ता नैतिकता और वैवाहिक जीवन के यौन-संबंधों को वरीयता प्रदान करते है। पर स्त्री-पुरूष सम्बन्धों में विवाहपूर्व, विवाहेत्तर यौन- संबंधों के अस्तित्व से इन्कार नहीं किया जा सकता है। प्रेमचंद की राह से विलगाकर जैनेन्द्र ने स्त्री-पुरूष संबंधो के अभूतपूर्व धरातल तलाश किये है तो यशपाल ने काम भावना के शमन हेतु विवाहेत्तर संबंधों को स्वीकृति दी है। अस्तित्ववादी अज्ञेय ने प्रतीकात्मक भाषा संकेतों से स्त्री-पुरूष,संबंधों की नींव रखी है।

जैनेंद्र ने जहाँ अपनी कहानियों में शरीर-आधारित प्रेम का चित्रण किया है वहीं उन्होंने सात्विक व आत्मिक प्रेम का भी चित्रण किया है। 'जान्हवी' कहानी में 'जान्हवी' किसी अज्ञात प्रियतम के प्रेम में मग्न है। वह रोज कौओं को रोटी के टुकड़े चुगाती है और गाती है..... "दो नैना मत खाईयों,मत खाईयों....पीउ मिलन की आस।" अपने प्रियतम के प्रति उसका प्रेम ऐसा दृढ़ है कि वह माता-पिता व्दारा कहीं विवाह की बात चलाए जाने पर भावी वर को पत्र द्वारा अपनी अनिच्छा जता देती हैं।

'पत्नी' कहानी में पति कालिन्दीचरण राष्ट्रसेवा में निमग्न है और उसकी पत्नी चूल्हे-चौके व घर-गृहस्थी में निमग्न रहकर पति की छोटी-से-छोटी जरूरतों का अत्यन्त सजगता-पूर्वक ध्यान रखती हैं। "राष्ट्र और समाज की सेवा का बीडा उठोए हुए भद्र,शान्त पति कालिन्दीचरण पत्नी के त्याग और मौन वेदना के बल पर अपना यश-मन्दिर खड़ा करता है और जरा-सी बात में पत्नी के ऊपर क्रोध से तिलमिला उठता हैं।"[7] इस प्रकार जैनेन्द्र ने अपनी कहानियों में स्त्री-पुरूष के सम्बन्धों के विविध रूपों का चित्रण किया है।

जैनेन्द्र के समान वर्मा, अज्ञेय मनोविश्लेषण और अस्तित्वबोध की विलक्षण कहानियाँ लिखते रहे हैं। चाहे वह 'रोज' कहानी या जयदोल। राम स्वरूप चतुर्वेदी की भी स्थापना है कि-" अज्ञेय व्यक्तिवादी हैं और व्यक्ति के स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास पर बल देते है। उनके मन में "व्यक्ति को नैतिक निर्णय की क्षमता से सम्पन्न करके ही अन्ततः समाज का नैतिक धरातल ऊँचा किया जा सकता है।"[8]

अज्ञेय ने स्त्री-पुरूष संबंधो का चित्रण भी व्यक्ति-बोध के आधार पर ही किया है। प्रेम को लेकर उनकी दृष्टि रोमांटिक है। 'साँप' कहानी में अज्ञेय ने सात्विक प्रेम का चित्रण किया है, वहाँ शरीर का निषेध है। नायक स्वप्न देखता है व स्वप्न को यथार्थ का रूप देने के लिए अपनी प्रेयसी को, "जंगल में, जहॉ सन्नाटा है, एकान्त है, जहाँ सब अपनी-अपनी धुन में ऐसे मस्त हैं कि मस्ती की एक नई धुन बन गई है, वहाँ,जहाँ कोई न होगा, वहाँ चलने को कहता है। प्रेयसी सहज ही उसके साथ चल पडती है। "वह वैसी ही मुग्ध,अपने में सम्पूर्ण मेरे साथ चली आ रहीं थी। मैं उसे देख लेता है , उसके साथ होने की बात सहसा मन में उभरती थी, फिर बीहड़ वन के अकेले, हरे, गीले, धुंधलपनकी, फिर मेरी आँखे उसकी आँखो की कोर से एक ढुलकी हुई लट के साथ फिसलकर उसके ओठों तक आती थी और फिर मेरा मन ठिठक जाता था। आगे वर्णन है कि प्रेयसी को लेकर उसके मन में वासना जागती है परन्तु उसकी सहजता,सरलता,निष्कपटता, व असहायता को देखकर वह स्वप्न की उलझन से मुक्त हो जाता है। स्वप्न में मैने देखा था वह और मौं... हम..लेकिन स्वप्न की उलझन जैसे सुलझ गई,मेरी दोहरी दीठ इकहरी हो गई और मैंने देखा , मैं अलग यहॉ, वह अलग वहॉ, बड़ी सुन्दर, बड़ी अच्छी मेरे साथ जंगल में अकेली, लेकिन अलग वहाँ।"[9]

अज्ञेय की एक अन्य कहानी ' वे-दूसरे' के सुधा व हेमन्त में तलाक हो चुका है व हेमन्त ने अन्तिम विदाई के लिए सुधा को सागर किनारे बुलाया है। विवाह पूर्व दोनों जानते थे कि दोनों का अन्यत्र लगाव रहा है। जो अब भी समप्त नहीं हुआ है। परन्तु फिर भी दोनों ने विवाह कर लिया था। तीन वर्ष तक तनाव पूर्ण वैवाहिक जीवन जीने के बाद उन्होंने तलाक ले लिया। हेमन्त जानता है कि अब अलग होते समय आपसी कटुता को समाप्त कर दिया जाये। कहानी के अन्त में हेमन्त सुधा को उस दूसरे के कदम मिलाकर आते, निर्लिप्त भाव से देखता है। 'अज्ञेय' ने प्रेम को 'आत्मिक भाव' के रूप में चित्रित किया है। यथा किन्तु कैसी अदभुत है यह बात कि जिसकी आत्मा हम दूसरों को सौपने को तैयार है- क्योंकि उसके ब्याह की बात स्वीकार करते है-उसी की देह को सौंपते क्यों हमे इतना क्लेश होता है? 'दूषित' या 'भ्रष्ट' क्या देह होती है,या मन-आत्मा।"[10] देह को वह आत्मा का खोल मात्र मानते है। "मैंने अपनी आत्मा तुम्हे दी-इसीलिए मेरी देह भी तुम लो- क्योंकि वह आत्मा का खोल है।

वास्तव में प्रेम को अज्ञेय वैयक्तिक प्रश्न मानते हैं और 'विवाह' को सामाजिक 'सम्बन्ध' एवं इस प्रकार दोनों मे कोई टकराव की स्थिति नहीं देखते-" सभ्य समाज में अगर ऐसी उलझनें पैदा होतीं हैं,तो सभ्य व्यक्ति उनका सामना भी सभ्य तरीकों से कर सकता है,प्यार जहाँ है, वहाँ हो और विवाह.... विवाह। विवाह तो सामाजिक सम्बन्ध है,व्यक्ति के जीवन में यह बाधक हो ही,ऐसा क्यों हैं ?"[11] कहना न होगा कि अज्ञेय ने स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की विविध स्थितियों का चित्रण मनोविज्ञान व बौध्दिकता के आधार पर किया है। परन्तु इसके बावजूद संवेदनशीलता का उसमे अभाव नहीं है।

प्रगतिशील कहानी आन्दोलन के दौरान यशपाल प्रगतिवादी विचारधारा के लेखक रहे हैं। वे कला को जीवन के लिए मानते है एवं उनका साहित्य सोद्देश्य हैं। साहित्य रचना के पीछे उनका मुख्य उद्देश्य एक शोषण-रहित समाज की रचना में योगदान देना है। प्रगतिवादी लेखक, होने के नाते उन्होंने हर प्रकार के शोषण का विरोध किया है,परन्तु " औरत के शोषण को लेकर उन्होंने शायद सबसे अधिक लिखा है । औरत के शोषण का रूप उजागर न करते हुए यशपाल ने औरत सम्बन्धी सामन्ती पूँजीवादी मानसिकता पर जबर्दस्त प्रहार किया"[12]

सुनत कौर भी यह मानती हैं कि यशपाल ने स्त्री -पुरूष सम्बन्धों के दूसरे पक्ष में उन्हें व्यापक आर्थिक व सामाजिक सन्दर्भो से जोडकर चित्रित किया है।अर्थात उन्हें मार्क्स-वादी दृष्टि से चित्रित किया है। ये कहानियाँ, " औरत के पतन का जिम्मेदार उन आर्थिक सामाजिक शक्तियों को मानती है, जिनका उन्मूलन किए बिना स्त्री और पुरूष के बीच स्वस्थ सम्बन्धों की स्थापना हो हीं नहीं सकती।"[13]प्रसंगवश 'पराया सुख' कहानी यशपाल की अत्यंत महत्वपूर्ण कहानी है। कहानी में उन्होंने चित्रित किया है कि किस प्रकार 'पैसा'सम्बन्धों के निर्धारण में अत्यंत महत्वपूर्ण

भूमिका अदा करता है। सेठी नामक पूँजीपति किस प्रकार एक निम्न-मध्यवर्गीय औरत की अस्मिता पर अपने पैसे के बल पर पूर्ण अधिकार कर लेता है। कारण "उसने सोचा, उसमें बात ही क्या है ? फिर भी वह एक दफे इंकार कर देना चाहती है। परन्तु इंकार का हक है उसे ?वह हक जो सबको होता है, उसे न था, अपनी आत्मा के ही सम्मुख न था। ... वेश्या का जीवन और क्या होता है... ।"[14] समाज के इस दारूण पक्ष को पेश करके यशपाल ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

स्त्री को पुरूष का जो अन्याय एवं अत्याचार सहना पडता है, उसके मूल में यशपाल आर्थिक शक्तियों को निहित मानते है। 'मार का मोल' कहानी में उन्होंने पति के द्वारा मार खाने वाली 'भार्या'स्त्री की तुलना में एवरग्रीन की युवती का चित्रण किया है जिसने युवक को तमाचा मारा है। जयकृष्ण,वेश्या के व्यवहार के स्पष्टीकरण में कहता है, "इस हरामजादी को कौन कोई उम्र-भर का सहारा देने वाला है, जो यह चुपके से मार खा जाए।"[15] वास्तव में पूँजीवादी व्यवस्था का , जहाँ नारी को भोग्या मात्र समझा जाता है,यशपाल ने इसका विरोध किया है, वह एक ऐसी समाजवादी व्यवस्था चाहते है जहाँ नारी को पुरूष के समान अधिकार प्राप्त हों एवं वह सही मायने में स्वतंत्र हो।

वस्तुतः जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी आदि मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद कहानीकारों ने नारी मन के सूक्ष्म अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित किया। कहानियों के माध्यम से दैनिक चर्यासे ऊबी एकरस जिन्दगी की उदासी से पूर्ण परिवेश, कहीं छद्मवेशी क्रांतिकारिणी स्त्री , कहीं मनोवैज्ञानिक ऊहापोह से ग्रस्त कुंठाएँ पालती स्त्री का परिवेश है। परिवेश हीं नहीं ,परिवेश की 'अदृश्य भयानक छाया' है जिसे कथाकारों ने अभिव्यक्त किया है।

परिवेश के प्रति सजग दृष्टि तो नई कहानी में भी परिलक्षित होती है किन्तु दृष्टि की प्रखरता उतनी नहीं है जितनी पिछले दो दशकों की कहानी में है। रचनाकार के रूप में नारी व्यक्तित्व से अधिक गहन व संश्लिष्ट रूप से जुड़ रहना जिससे यह आभास हो सके ,आज की नारी क्या करती है, कैसे रहती है, क्या सोचती है, किस जिन्दगी को पाने के लिए क्रियाशील है, कितनी संतुष्ट है। यही अपने परिवेश से जुड़ना है।[16] स्त्री-पुरूष संबंधों में जो बदलाव विगत पचास-साठ वर्षो में आये है, उन्हीं का प्रतिफल कतिपय रचनाकारों ने अपनी कहानियों में रचा है।

2.2 समकालीन कहानी के विभिन्न आन्दोलन

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय रचनाकारों के सामने देश के नवनिर्माण नये मनुष्य की अवधारणा,विकास की नयी मंजिले, संयुक्त परिवारों में बिखराव कस्बे,गाँव, जिले से शहरों की ओर अतिक्रमण,कामकाजी महिलाओं की समस्याएँ और आधुनिकताबोध के कारण नयी सोच, नयी जीवन शैली की विडम्बनाएँ मुखर थी। समय - समय आगे ऐतिहासिक संक्रमण,राजनैतिक

परिवर्तन और सामाजिक-आर्थिक संरचनाओं ने कहानी की विकास प्रक्रिया को बदला। हिन्दी कहानियों में अलग-अलग आंदोलन पनपे जो कभी पिछले कहानी आंदोलन के विकास की कडी भर रहे, कभी वे समानान्तर रूप से सृजना के दावेदार बने।

समकालीन कहानी के आन्दोलनों में प्रमुख रूप से निम्न कहानी आन्दोलनों की चर्चा अवश्यम्भावी है नयी कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समान्तर कहानी, सक्रिय कहानी, जनवादी कहानी, आदि ।

नयी कहानी : नयी कहानी आन्दोलन के तीन प्रमुख रचनाकार राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, और कमलेश्वर माने जाते हैं। पर उनके साथ-साथ इस आन्दोलन में निर्मल वर्मा, मन्नू भण्डारी, शानी और उषा प्रियम्वदा का नाम भी जुड़ा हुआ हैं।

नई कहानी आन्दोलन के बारे में एक ऐतिहासिक चुटकुला प्रचलित हैं। एक• बार कमलेश्वर से पूछा गया' कि " नयी कहानी आन्दोलन के प्रमुख दावेदार कौन हैं ? कमलेश्वर ने कहा देखो बिच्छुओं की एक पाँत चली जा रही है, आप जिस बिच्छू पर उँगली रखेंगे वहीं• आपको डंक मार देगा। यही हाल नयी कहानी के विभिन्न रचनाकारों का हैं।" बात सच भी हैं- राजेन्द्र यादव ,मोहन राकेश और कमलेश्वर ने ही नयी कहानी का जेहाद खडा किया। पर कहानी के स्वयंभू आलोचक, और कहानीः 'नयी कहानी'के लेखक नामवर सिंह का कथन भी कम विवादास्पद नहीं हैं कि " 'परिंदे' सिर्फ निर्मल वर्मा की पहली कृति नहीं है बल्कि जिसे हम 'नयी कहानी' कहते हैं उसकी भी पहली कृति हैं।"(17)

कभी इलाहबाद के साहित्यिक जगत में कमलेश्वर ,मार्कण्डेय और दुष्यंत कुमार को त्रिशूल की उपाधि दी जाती थी। जिसमें मार्कण्डेय आंचलिक कहानी आन्दोलन के महत्वपूर्ण लेखक और ग्राम जीवन के सजग चितेरे माने जाते थे। मार्कण्डेय और अश्क की आपस में कम हीं बन पाती थी। जिसके प्रमुख कारण नागार्जुन के लेखन की पक्षधरता और विरोध थे। मार्कण्डेय न केवल लोक-गीतों, लोक संस्कारों के ज्ञाता रहे हैं बल्कि वे एक सुधी आलोचक भी है। मार्कण्डेय का कथन रहा है कि नई कहानी से हमारा मतलब उन कहानीकारों से है, जो सच्चे अर्थो में कलात्मक निर्माण है,जो जीवन के लिए उपयोगी और महत्वपूर्ण होने के साथ ही,उसके किसी न किसी नए पहलू पर आधारित है या जीवन के नये सत्यों को एकदम नई दृष्टि से दिखाने में समर्थ है।' नवीनता इसमें नहीं है कि उसमें किसी अछूते भूभाग के अजीब से प्राणियों का वर्णन है, बल्कि इसमें नयापन है कि साधारण मानवीय जीवन में वह कौन सा विशेष नयापन है कि जो सामाजिक परिस्थितियों के परिवर्तन के कारण पैदा हो गया है, या बिना किसी परिवर्तन के भी जीवन का कौन सा ऐसा पहलू है जो साहित्य में अब तक अछूता हैं। (19)

नया ,नयापन और नयी कहानी के नये अंदाज, नये कथ्य और नये शिल्प को लेकर एक लम्बी बहस चली हैं। जिसके कारण राजेन्द्र यादव ने भी कहा है कि नये की व्याख्या के गंभीर प्रयत्न हुए और कहा गया कि नये युग के अनुरूप संवेदना,दृष्टिकोण और भाव-बोध ही नये होते है-आयु अथवा लेखन-अवधि नहीं। नई उम्र के लेखकों में भी पुराने भाव-बोध के लेखक हो सकते हैं और पुरानों में भी नये ।(20)

लेकिन नयी कहानी आन्दोलन ने अपना सार्थकदाय जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी,यशपाल के लेखन की तुलना में अलग अभिव्यक्ति पैटर्न में रचा है। जिसकी ताईद सुरेन्द्र चौधरी और रामचंद्र तिवारी ने की हैं। कहना न होगा कि नयी कहानी की प्रतिष्ठा के साथ उसका विरोध आरम्भ हो गया था। कहने के लिए तो यह विरोध नयी कहानी की जडता को तोडने और नये जीवन संदर्भ को व्यक्त करने के लिए आरम्भ किया गया था,किन्तु वास्तविकता यह हैं कि यह विरोध अपने को प्रतिष्ठित करने के लिए आरम्भ किया गया था।(21) जिसके दावेदार अपने आपको अकहानी आन्दोलन के प्रणेता मानते रहे हैं।

नयी कहानी आन्दोलन में "यथार्थ की प्रामाणिकता पर बल दिया गया। अतः कहानी संरचना के भोगे हुए यथार्थ के चित्रण को महत्वपूर्ण माना गया । पूर्व कहानी जीवन का चित्र थी, यहाँ वह जीवन का अनुभव खंड हो गयी। इसकी 'सामाजिकता भी व्यक्तिगत थी।"(22) नयी कहानी में व्यक्ति की स्थिति और मानसिकता का चित्रण ,समसामायिक संघर्षशील सामाजिक संदर्भो से जोड़कर संवेदनशीलता और प्रामाणिकता से किया गया था। 'पुष्पपाल सिंह ने नयी कहानी का संबंध 'युगबोध' से जोडते हुए कहा हैं कि " भोगे हुए या अनुभव यथार्थ की अभिव्यक्ति के किसी प्रकार के निषेध भाव(इन्हिबिशन्स) न होने के कारण यह यथार्थ बहु आयामी और अत्यंत व्यापक हैं। इसलिए इस कहानी आन्दोलन में एक प्रकार का अपूर्व वैविध्य दिखाई देता हैं।(23)

1962 के आसपास भारत चीन सीमा संघर्ष और 1964 के भारत पाक संघर्ष में देश के राजनैतिक नेतृत्व का खोखलापन उजागर और मोहभंग की स्थिति पनपी। जिसके परम्परागत मूल्यों विश्वासों, आस्थाओं को गहरी चोट पहुँची। जिसके कारण अकहानी आन्दोलन के विकास का रास्ता खुला।

समकालीन कहानी के विकास संबंधी विवेचन हेतु नई कहानी की तर्ज पर अकहानी, सचेतन कहानी और समांतर कहानी के आन्दोलन भी उल्लेखनीय है। गंगाप्रसाद विमल,राजकमल चौधरी, सुधा अरोड़ा आदि का नाम अकहानी आन्दोलन से संयुक्त किया जाता है । सचेतन कहानी से जुड़े हुए कहानीकार है- जगदीश चतुर्वेदी, मनहर चौहान, महीप सिंह और सुदर्शन चोपड़ा। बाकायदा घोषणा पत्र और प्रतिज्ञा-सूत्रों के साथ कहानी लेखन में प्रवृत्त होने की रचनात्मक असंगति के कारण ये आन्दोलन अपनी ही मौत मर गए और इनके कहानीकारों ने अपनी स्वतंत्र पहचान इन आन्दोलनों की बजाय अपनी रचनाात्मकता से निर्मित की।

इसी तरह समांतर कहानी का आन्दोलन भी आया। इसके सूत्रधार थे 'सारिका'के सम्पादक कमलेश्वर और आलोचक थे डॉ.विनय। कामता नाथ, जितेन्द्र भाटिया, इब्राहीम शरीफ दामोदर सदन ,मधुकर सिंह, सतीश जमाली, विभु कुमार, श्रवण कुमार, सुदीप, सनत कुमार से.रा.यात्री, शीला रोहेकर, निरूपमा सेवती और मृदुला गर्ग समांतर कहानी आन्दोलन में शामिल माने जाते है। कमलेश्वर के 'सारिका' से हटने के बाद नेतृत्व के संकट से यह आन्दोलन भी बिखर गया और लगभग अंतिम रूप से इस बात को रेखांकित कर गया कि समृध्द रचनात्मकता और प्रतिभावान रचनाकार किसी आन्दोलन के सहारे विकसित नहीं होते। इनमें से अनेक कहानीकारों ने अपनी स्वतंत्र पहचान निर्मित की है और आज वे इस आन्दोलन की बजाय अपनी रचनाओं से जाने-माने जाते है।(24)

अकहानी : असामान्य और अतिरंजनापूर्ण चरित्रों के इर्द-गिर्द बुनी गई। सचेतन कहानी में सभी वर्गो के पात्र चित्रित हुए, लेकिन मामूली आदमी ने सचेतन कहानीकारों को बहुत अधिक आकर्षित नहीं किया। फिर आया मामूली आदमी(आम आदमी) की हड्डियों पर अपने स्वार्थ के कबाब सेंकने वाला समान्तर कहानी आन्दोलन। इस आन्दोलन के केन्द्र में स्थित आम आदमी खोज कर निकाला हुआ और बहुत कुछ गढ़ा हुआ था। लेकिन समान्तर कहानी को यह श्रेय देना ही होगा कि पहली बार इतनी जोर शोर से कहानी को मामूली आदमी की जिन्दगी से जोड़ने का नारा दिया गया। बाद में जनवादी कहानी के तहत निम्नवर्गीय चरित्रों को उनके समूचे परिवेश के सन्दर्भ में सहानुभूति और समझदारी के साथ उकेरने की सार्थक कोशिश देखने को मिलती हैं। जनवादियों के समान्तर किसी किस्म की खेमेबाजी से प्रायः असम्पृक्त कहानीकारों को भी मामूली आदमी की नियति से साक्षात्कार करते देखा जा सकता है।(25)

समान्तर कहानी आन्दोलन और जनवादी कहानी आन्दोलन के बीच पनपे हुए सक्रिय कहानी आन्दोलन की चर्चा अवश्यम्भावी है। समांतर कहानी के अवसान के समय राकेश वत्स ने 'मंच-78' और 'मंच-79' नामक 'सक्रिय कहानी के दो विशेषांक निकाले। बाद में इन्हीं विशेषांकों की सामग्री राकेश वत्स के संपादन में सक्रिय कहानी की भूमिका के नाम से प्रकाशित हुयी।

सक्रिय कहानी आन्दोलन ने लेखक की सोच और असलियत में व्यवहार के बीच पुल बनाकर जीवन संघर्ष के कुरूक्षेत्र में पहल करने की चुनौती दी है। डॉ.शंभुनाथ के अनुसार-"रचनाकार के रूप में सक्रियता का बराबर मतलब हैं- पहले अपनी सीमाओं को समझना, छपाई-तन्त्र की सीमाओं को समझना, लोक-शाही तथा निम्न वर्ग के कृषक, मजदूर, बेकार, भूमिहीन संघर्षशील जनता के पूँजीवादी, सामन्ती और उपनिवेशवादी शत्रुओं को पहचानना,फिर रचना के साथ जन क्षेत्रों में चला जाना। (26)

डॉ.जयभगवान गोयल का मत इस संदर्भ में रहा हैं कि "निष्क्रिय पात्र भी पाठकों में अपनी सक्रियता भरकर अपनी सार्थकता सिद्ध कर सकते

हैं। सक्रिय की पहचान रचना में रचना के पात्रों के स्तर पर नहीं बल्कि पाठकों की प्रतिक्रिया और संवेदना के स्तर पर की जा सकेगी। सक्रिय कहानी आन्दोलन के प्रमुख रचनाकार राकेश वत्स,सुरेन्द्र कुमार, रमेश बतरा, और विकेश निझावन स्वीकारें गये हैं। (27)

जनवादी कहानी आन्दोलन : के बारे में रामचन्द्र तिवारी का अभिमत है कि सन 1977 में 'दिल्ली विश्वविद्यालय' में जनवादी विचारमंच की स्थापना हुई। अक्टूबर सन 1978 ई. में इसी मंच के तत्वावधान में हिन्दी-लेखकों का एक शिबिर आयोजित किया गया। शिबिर में 1967 से1977 ई. तक के जनवादी साहित्य का मूल्यांकन किया गया। फरवरी 1982 में दिल्ली में जनवादी लेखक मंच का प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ। इसी समय से कहानी रचना के क्षेत्र में जनवादी आन्दोलन सक्रिय और गतिशील हुआ।

जनवादी कहानी की परम्परा का आरंभ प्रेमचन्द की 'कफन' और 'पूस की रात' जैसी कहानियों से माना गया। इसका क्रमबद्ध विकास 'यशपाल' की 'परदा','रांगेय राघव की 'गदल', भैरवप्रसाद गुप्त की 'हड़ताल', मार्कण्डेय की 'हंसा जाई अकेला', भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत', अमरकान्त की 'दोपहर का भोजन', शेखर जोशी की 'बोझ' जैसी कहानियों में देखा गया। ज्ञानरंजन और काशीनाथ सिंह जैसे कहानीकारों ने इसे आगे बढाया। इसके बाद रमेश उपाध्याय,रमेश बतरा, हेतु भारद्वाज, नमिता सिंह, असगर वजाहत, धीरेन्द्र अस्थाना, उदय प्रकाश आदि लेखकों ने इसे समृद्ध किया। वैचारिक धरातल पर जनवादी कहानी मार्क्सवाद को आधार बनाकर चलती है। इसमें मुख्यतः किसानों ,मजदूरों, पीड़ितों दलितों और असहायों का जीवन-संघर्ष चित्रित किया जाता है। इसलिए उनकी कहानी का शिल्प कमजोर पड गया है। किन्तु जहाँ वैचारिक आग्रह से मुक्त होकर दलितों,पीडितों के जीवन संघर्ष को वाणी दी गयी है, वहाँ जनवादी कहानियाँ भी अत्यंत मार्मिक और विश्वसनीय बन गयी है।(28)

2.3 समकालीन कहानी की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

समकालीन कहानी का परिप्रेक्ष्य बहुत व्यापक हैं। नई कहानी आन्दोलन के रचनाकारों ने मनुष्य की आंतरिक अनुभूतियों और मनोविश्लेषण के आत्मपरक सूत्रों को महत्व दिया है। निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, मन्नू भण्डारी और उषा प्रियम्वदा की रचनाएँ हमारे कथ्य की साक्ष्य हैं । अकहानी आन्दोलन के गंगाप्रसाद विमल, रमेश बक्षी महेन्द्र भल्ला आदि रचनाकारों ने भ्रष्ट राजनीति, राष्ट्रीय नेतृत्व के खोखलेपन और मूल्य विहीनता की स्थिति को विभिन्न पात्रों के माध्यम से रेखांकित किया हैं।

समान्तर कहानी आन्दोलन में आम आदमी की परवशता, विवशता, दीनता का जिक्र है और प्रतिरोध की भावना का विकास और

सक्रिय कहानी सहज कहानी नाम और मुखौटे बदलकर विचार और कर्म की एकता, चिन्तन और दर्शन की व्यावहारिकता पर जोर देती है।

जनवादी कहानी आन्दोलन एक ओर वामपंथी आस्था से मजदूरों-किसानों की पक्षधरता अपनाने की पहल रचता है वही वह स्त्री विमर्श और दलित्ए विमर्श के सरोकारों में सार्थक हस्तक्षेप और न्यायपरक पक्षधरता अपनाने की इस्सलाह देता है। समकालीन कहानी के विकास क्षेत्र में हम प्रगतिशील आन्दोलन की सकारात्मक भूमिका को नजर अंदाज नहीं कर सकते है। प्रेमचन्द स्वयं हिन्दी और उर्दू के दोआब थे। समकालीन कहानी ने विभिन्न भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषा साहित्य से अपनी साहित्यिक उर्जा ग्रहण की है। सुधीजन जानते है कि प्रेमचन्द की मृत्यु के आस ही पास उर्दू में बेहद गर्मागर्म कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ था । संग्रह का नाम था 'अंगारे'। इस अभूतपूर्व कहानी के प्रमुख लेखक थे, सज्जाद जहीर, अहमद अली और डॉक्टर रशीद जहाँ आदि । कुल सात - आठ कहानियाँ थी इस संग्रह में। पर संग्रह की सारी कहानियाँ पूर्ण रूप से विदेशी प्रभाव से सराबोर थी। इंग्लैंड, फ्रांस, और अमेरिका में जो उन दिनों 'साइकोएनेलिसिस' मनोविश्लेषण, सेक्स, अवचेतन वर्णन, दमित कामवासना की अभिव्यक्तिपूर्ण कहानियाँ लिखी जा रहीं थी,उन्हीं के पूर्ण प्रभाव में इस संग्रह की सारी की सारी कहानियाँ लिखी गई थी। ये कहानियाँ अपनी कथ्य सामग्री में इतनी नई,आकर्षणमयी और उत्तेजक थीं कि इनका प्रभाव व्यापक रहा। इस संग्रह के सारे कहानीकार 'अंगारे ग्रुप' के नाम से प्रसिद्ध हुए। इसके फलस्वरूप हिन्दी उर्दू दोनों में(उर्दू में बहुत अधिक) मनोविश्लेषणवादी ,सेक्स प्रधान कहानियाँ लिखी जाने लगी थी। (29)

नयी कहानी और प्रगतिशील विचाधारा के बरक्स हिन्दी में अज्ञेय, जैनेन्द्र, इलाचन्द जोशी आदि में सैक्स की दलित इच्छाओं कुण्ठा और अवचेतन संबंधी कहानियाँ लिखी हैं। जिसका विवेचन इसी अध्याय में "समकालीन कहानी की पृष्ठभूमि"नामक शीर्षक के अन्तर्गतउपलब्ध हैं स्वार्थपरता, मूल्यहीनता, अवसरवादिता, समकालीन कहानी में आंतरिक वृत्ति के रूप में सक्रिय हैं। महानगरों में आर्थिक दबाव ,औधोगीकरण एवं भौतिक स्पर्द्धा से उत्पन्न संवेदन-शून्यता तथा सम्बन्धों को मात्र एक सीढ़ी मानकर उस पर चढ़कर 'कहीं' पहुँचने की स्वार्थपरता प्रसंगवश प्रतिमा वर्मा की पुनरारंभ कहानी में उपलब्ध है , जहाँ सम्बन्ध और नैतिकता का प्रश्न अणिमा एवं नवीन के मध्य उभरता हैं। जिसके कमलेश्वर ने कहा हैं-" आज के बदलते आर्थिक और सामाजिक संदर्भो में बहुत-सी चीजे और मान्यतायें अपने अर्थ खो चुकी है, उन्हीं में सैक्स भी हैं। क्या आज भी सैक्स पारम्पारिक और पारिवारिक सम्बन्धों में स्थायित्व का आधार है ?" पुनरारंभ इसी प्रश्न की सीमाओं में घिरी एक सशक्त कहानी हैं।"अणिमा एवं उसकी माँ को नवीन नौकरी दिलवाने घर बुलाता है, परन्तु प्रमोशन के लिए लगातार इस्तेमाल करके कालीन पर गिराने एवं कुछ दूर जाकर ठिठक जाने वाली खाली बोतल सरीखा छोड़ देता हैं। पापबोध से मुक्ति पाने के

लिए मनोज को चालीस हजार नकद और कतिपय सुविधाएँ प्रदान करता है।[30] समकालीन कहानी के वर्तमान परिदृश्य में मूल्य विहीनता एक यथार्थपरक सच हैं।

विजय मोहन स्वयं एक कथाकार है और सुधी आलोचक भी। वे निर्मल वर्मा की कहानियों के साक्ष्य से परम्परा और आधुनिकता बोध की टकराहट को पेश करते हैं। वर्तमान दौर में आतंक, हताशा, निराशा, संघर्ष, हीन भावना यथार्थपरक दुनिया का प्रतिरूप है इसलिए निर्मल की प्रत्येक कहानी के पात्र इसी अंधेरे, आतंक तथा टेरर में रहते हैं। चाहे **'परिंदे'** की लतिका से, **'मायादर्पण'** की तरून हो, **'लन्दन की एक रात'** का नीग्रो हो, या **'सितम्बर की एक शाम'** , **'आखिरी गवाह'** , **'दो घर'** तथा **'बीच बहस में'** के पात्र ! सभी आतंकग्रस्त तथा अभिशप्त पात्र हैं। आखिर यह किस चीज का आतंक तथा अभिशाप है जो सामान्य चलते -फिरते, हँसते-बोलते, जिन्दा° इंसानों को लेखक की 'दिल की दुकान' में ले जाकर 'सुरदा', 'चीथडों' और 'हड्डियों' में बदल देता हैं। दरअसल, निर्मल की कहानियों की दुनिया में प्रवेश करना एक ऐसे तिलस्मी प्रेतलोक में प्रवेश करना हैं जहाँ खुली धूप की जगह मैली पीली चांदनी है,हरी पत्तियों की जगह सूखी पत्तियों के ढेर हैं, हँसते-मुस्कराते लोगों की जगह खामोश, बेआवाज आँसू बहाते लोग है, साधारण बातचीत की° जगह' दबी हुई फुसफुसाहटें° तथा 'डायरी के खेल' हैं।[31]

उषा प्रियम्वदा के पात्र हिन्दुस्तानी पात्रों की विपदा को वापसी में ही उजागर करते हैं बल्कि वह विदेशी प्रांतों और क्षेत्रों में हिन्दुस्तानी पात्रों की मिसफिट स्थिति को भी अक्सर रेखांकित करती हैं। और हिन्दी कहानी केवल देश की घटनाओं तक सीमित न रहकर विदेशों की असंगतियों और अमानवीयताओं पर भी अँगुली रखती हैं, इसका प्रमाण 'कार्लो हब्शी का संदूक' (रमाकान्त) और 'इंतजार' हैं, (कमलेश्वर) आदि कहानियाँ देती हैं। इस दशक में कुछ कहानियाँ ऐसी समस्याओं पर लिखी गई हैं, जो पहले कभी महत्वपूर्ण और गौरतलब नहीं लगी थीं।

दूरदर्शन के प्रचार-प्रसार ने जहाँ ज्ञान-विज्ञान को झोपड़ों और चौपालों में पहुंचाया है, वही कुछ मुश्किलें भी पैदा की हैं। 'सिर का साया' (दिनेश पालीवाल) और 'बूढी आँखों के सपने' (माधव नागदा) आदि कहानियाँ इस सन्दर्भ में पठनीय हैं । संचार माध्यमों के बहाने से दो पीढ़ियों की मानसिकता का फर्क दिखाना इन कहानियों का अभीष्ट हैं। कृत्रिम गर्भाधान से उपलब्ध मातृ-सुख(उर्मिला शिरीष की कहानी-'कोशिश') तब बहुत छोटा लगने लगता हैं जब इस तरह से प्राप्त शिशु को लेकर माता-पिता कई तरह की कुण्ठाओं और विकृतियों के शिकार हो जाते हैं। (32)

समकालीन कहानी के विस्तृत क्षेत्र में आभ्यन्तर का बाहयीकरण 'आंतरिक मनोवृति के रचनाकारों के पास उपलब्ध हैं। (निर्मल वर्मा ,मोहन राकेश, कमलेश्वर, मन्नू भण्डारी) तो बाह्य का आभ्यन्तरी करण बहिर्मुखी

रचनाकारों(शिवमूर्ति, शैवाल, रोहिताश्व, मैत्रेयी पुष्पा और चित्रा मुदगल आदि) के पास उपलब्ध हैं। मनोविश्लेषण की भाषा में जिसे इण्ट्रोवर्ट और एक्सट्रोवर्ट कहा जाएगा। धनंजय वर्मा के शब्दों में "मुक्तिबोध के 'बाह्य का आभ्यन्तीकरण' का मानो अग्रबोध ही पेश कर दिया हैं : "बाह्य जगत में लेखक जो कुछ देखता,सुनता और अनुभव करता हैं, उसको वह ज्यों-का-त्यों अपने अन्तर्जगत में नहीं अपना लेता। मनुष्य की जैसी रूचि होती हैं, जैसी धारणा होती हैं, जैसी बुद्धि होती हैं और जैसी विशेष परिस्थिति होती हैं, उन्हीं के अनुकूल वह बाह्य जगत को निर्मित कर ग्रहण करता हैं।"(33)

प्रतिबद्ध रचनाकार चाहे कहानीकार हो अथवा कवि-उपन्यासकार। वह अपने ऐतिहासिक संक्रमण,युगबोध, देशकाल के युगीन संघर्ष से असम्पृक्त नहीं रह पाता हैं। सातवे दशक के नक्सलवादी उभार पर जहॉ कतिपय रचनाएँ काशीनाथ सिंह, सतीश जमाली,शैवाल आदि ने लिखी हैं। वहीं आपात काल की स्थिति में प्रतीकात्मक ढंग की रचनाएँ लिखी गयी हैं। राजनीतिक घटनाक्रम और' समकालीन कहानी के परिदृश्य पर वेद प्रकाश अमिताभ ने रेखांकित किया हैं कि इंदिरा गंधी की मृत्यु के बाद दिल्ली में हुए दंगों को **'एक रात का मेहमान'** (नीलकान्त), **'पनाह'** (सत्येन कुमार), **'अंधेरे मे किरण'** (माधव नागदा), **'झुटपुटा'**(भीष्म साहनी), आदि कहानियों में आधार बनाया गया हैं। कहानिकारों का केन्द्रीय विचार यह हैं कि ये दंगे एक तरह की साजिश हैं और इस अमानवीय साजिश के बावजूद मानवीय मूल्य अभी समाप्त नहीं हुए हैं। इस धारणा को व्यक्त करने के लिए कहानीकारों ने अलग-अलग पद्धतियाँ अपनाई हैं।

भीष्म साहनी ने 'झुटपुट' में कई परस्पर विरोधी मनोवृत्तियों को व्यक्त करने वाले चरित्रों और प्रसंगों को संश्लिष्ट करके अपनी बात कही हैं। दूध की लारी लेकर आने वाला सरदार ड्राइवर, सरदार अंकल की डोलची लिए लाइन में खडी सक्सेना की बच्ची,परिचित सरदार जी का हालचाल जानने को उत्सुक बलराम को भीष्म साहनी ने कहानी में इस तरह व्यवस्थित किया हैं,जैसे 'आँखों देखा हाल' सुन रहे हो। इसके विपरीत 'एक रात का मेहमान' में दंगा-फसाद के दौरान अनुभव होने वाले आतंक समूची भयावहता के साथ मूर्त किया गया हैं। यह कहानी सडक के हादसे पर नहीं, कमरें के भीतर के भय पर केन्द्रित हैं।(34) अतः इसकी भाषा और कथन शैली में 'झटपुटा' से भिन्नता स्वाभाविक हैं। "कमरा भीतर से बोल्ट था, फिर भी एक उत्तेजित भनभनाहट बुलन्द होती जा रही थीं। और विभिन्न दिशाओं में चक्कर काटती हुई प्रतीत होती थीं।" (35)

समकालीन कहानी के वर्तमान दौर में जिन दो समान्तर प्रवृत्तियों को रेखांकित किया जाना चाहिए वे हैं- दलित विमर्श और स्त्री-विमर्श। हिन्दी में दलित-विमर्श की पृष्ठभूमि तैयार करने में 'सारिका' के कमलेश्वर द्वारा सम्पादित दो विशेषांको (1975) और संचेतना के मराठी दलित साहित्य विशेषांक (1981) का बहुत योगदान हैं । **'दलित कहानियाँ'** (सूर्यनारायण रणसुभे) भी इस दिशा में उल्लेखनीय प्रयास हैं। हिन्दी कहानी में दलित-

विमर्श की चर्चा दो सम्पादित कहानी संग्रहों से विशेष मुखर हुई हैं। **'दूसरी दुनिया का यथार्थ'** (सं.रमणिका गुप्ता) और **'यातना की परछाइयाँ'**(स.डॉ.एन.सिंह) में संकलित कहानियों से यह प्रमाण मिलता है कि दलित कहानीकारों की अच्छी खासी संख्या रचनात्मक दृष्टि से सक्रिय हो चुकी थीं । इन कहानीकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी अलग पहचान बनाई। बाद में उनके दो संग्रह प्रकाश में आए-**'सलाम'**और **'घुसपैठिए'** अन्य कहानीकारों में दयानन्द बटोही, जयप्रकाश कर्दम, सूरजपाल चौहान,बी.एल.नय्यर, रत्नकुमार सांभरिया,कुसुम मेधवाल, कुसुम वियोगी आदि उल्लेखनीय है । [36] वर्तमान दौर में जयप्रकाश कर्दम, 'दलित साहित्य' पत्रिका में वार्षिक विशेषांक भी प्रकाशित रहा है। पर यह भी वस्तुपरक सत्य है कि 'हंस' पत्रिका के माध्यम से राजेन्द्र यादव ने दलित साहित्य विमर्श और स्त्री-विमर्श को परवान दिए है।

स्त्री-विमर्श पहले भी हुआ है, पर पुरूष रचनाकारों की दृष्टि-विशेष से सुधी जन जानते ही हैं कि नारी-विमर्श जहाँ वूमन डिस्कोर्स का पर्याय है वहाँ 'नारीवाद' फेमिनिस्ट एप्रोच का। वर्तमान दौर की महिला लेखिकाएँ नारी विमर्श से ज्यादा 'नारीवाद' की ओर प्रवृत है। यों तो प्रेमचन्द युग में भी उषादेवी मित्रा ,कमला चौधरी, सत्यवती मलिक, सुभद्रा कुमारी चौहान, चन्द्रकिरण सौनरिसा,होमवती देवी आदि कहानी लेखिकाएँ सामाजिक संदर्भो को केन्द्र में रखकर रचनाकर्म में प्रवृत थी और उनके बाद रजनी पन्निकर , कँचनलता सब्बदवाल, शान्ति मेहरोत्रा, सोमावीरा, राजेश्वरी देवी चकोरी और स्वर्ण लता देवी आदि लेखिकाओं ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया था। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तो महिला लेखिकाओं का एक वर्ग उठ खड़ा हुआ।

वर्तमान दौर में महिला कहानीकारों की दो पीढियाँ सक्रिय हैं। पहली पीढ़ी में वे लेखिकाएँ आती है जो 'नयी कहानी' के दौर के आसपास से लिखती आ रहीं हैं और दूसरी पीढ़ी में वे लेखिकाएँ आती हैं जिन्होने आठवें दशक और नवम दशक के प्रारम्भ में लिखना आरम्भ किया हैं। पहाली पीढ़ी की लेखिकाओं में शशिप्रभा शास्त्री ,शिवानी , कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियम्वदा, ममता कालिया आदि उल्लेखनीय हैं। दूसरी पीढ़ी में दीप्ति खण्डेलवाल, मृणाल पाण्डेय, मृदुला गर्ग, चित्रा मुदगल, राजी सेठ, मंजुल भगत, मणिका मोहिनी, प्रतिमा वर्मा, सुधा अरोड़ा, निरूपमा सेवती, सूर्यबाला, मेहरून्निस्सा परवेज, इन्दुबाला,अचला नागर ने अपनी निजी पहचान कायम कर ली हैं।

विगत दसेक वर्षो से मैत्रेयी पुष्पा, चित्रा मुदगल, नासिरा शर्मा, और कमल कुमार ने न केवल नारी विमर्श की सार्थक रचनाएँ लिखी है बल्कि कहीं-कहीं नारीवादी विमर्श की सरहदें पार की हैं। आज की सुशिक्षित ,कामकाजी कैरियर को प्रमुखता देनेवाली नारी न केवल पुरूषों की तुलना में अधिक श्रम करती हैं बल्कि वह अपनी अस्मिता, स्वतंत्रता, निर्णय लेने की शक्ति को अपनाने लगी हैं। टेस्ट ट्यूब बेबी की वैज्ञानिक खोज ने

कोख को किराये पर देने की एक अभूतपूर्व नारीवादी प्रणाली विकसित की हैं।

संतान को जन्म देने या न देने, गर्भपात करने या न करने की स्वतंत्रता नारी की अपनी निर्णय शक्ति पर निर्भर हैं। भारत जैसे पुरूष प्रधान समाज में देह मुक्ति,यौन मुक्ति स्त्री पुरूष सम्बन्धों की नयी पहल कतिपय पारम्परिक सोच के लोगों को असहज बना देगी पर वैश्वीकरण और आर्थिक उदारता ने नारीवाद विमर्श के नये संदर्भ विकसित कर लिए हैं। जिनकी चर्चा आगामी अध्यायों में प्रसंगानुसार की जायेगी।

सन्दर्भ सूची : द्वितीय अध्याय

लेखक	पुस्तक	
1. धनंजय वर्मा	: हिन्दी कहानी का रचना शास्त्र	पृ.107
2. धनंजय वर्मा	: हिन्दी कहानी का रचना शास्त्र	पृ.108
3. संत बख्श सिंह	: नयीकहानी : कथ्य और शिल्प	पृ.190
4. रामविलासशर्मा	: प्रेमचन्द और उनका युग	पृ.158
5. उषा झा	: हिन्दी कहानी और स्त्री विमर्श	पृ.81
6. लक्ष्मी नारायण लाल	: आधुनिक हिन्दी कहानी	पृ.18
7. रामदरश मिश्र	: हिन्दी कहानी: अंतरंग पहचान	पृ.27
8. रामस्वरूप चतुर्वेदी	: अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या	पृ.167
9. अज्ञेय	: 'सांप' कहानी द्वारा लौटती पगडण्डियाँ	पृ.389
10. अज्ञेय	: 'सांप' कहानी द्वारा लौटती पगडण्डिया	पृ300
11 अज्ञेय	: 'सांप' कहानी द्वारा लौटती पगडण्डियाँ	पृ.299
12 . पाण्डेय व शर्मा	: यशपाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.143
13. सुनंत कौर	: समकालीन हिन्दी कहानी : स्त्री पुरूष संबंध	पृ.48
14. यशपाल	: ज्ञानदान	पृ.85
15. यशपाल	: चित्र का शीर्षक	पृ.51
16. उषा झा	: हिन्दी कहानी और स्त्री विमर्श	पृ.108
17. नामवर सिंह	: कहानी : नयी कहानी	पृ.52
18. कमलेश्वर	: जो जीवन जिया	पृ.21
19. मार्कण्डेय	: हँसा जाई अकेला भूमिका	

20. राजेन्द्र यादव : कहानीः स्वरूप और संवेदना पृ.49

21. रामचन्द्र तिवारी : हिन्दी का गद्य साहित्य पृ.304

22. लालचन्द गुप्त : हिन्दी कहानी का विकास पृ.28

23. पुष्पपाल सिंह : समकालीन कहानी : युगबोध संदर्भ पृ. 56

24. धनंजय वर्मा : हिन्दी कहानी का रचना शास्त्र पृ.114

25. वेद प्रकाश अमिताभ : हिन्दी कहानी का समकालीन परिदृश्य पृ. 23

26. शंभुनाथ : सक्रिय कहानी की भूमिका पृ. 54

27. जयभगवान गोयल : साहित्य चिंतन पृ.202

28. रामचन्द्र तिवारी : हिन्दी का गद्य साहित्य पृ.306

29. लक्ष्मीनारायण लाल : आधुनिक हिन्दी कहानी पृ.17

30. कमलेश्वर : 'सारिका' अक्टूबर पृ.28

31. विजयमोहनसिंह : आज की कहानी पृ.59

32. वेदप्रकाश अमिताभ : हिन्दी कहानी का समकालीन परिदृश्य पृ.33

33. धनंजय वर्मा : हिन्दी कहानी का रचना शास्त्र पृ.99

34. भीष्म साहनी : द्वारा हिन्दी कहानी का समकालीन परिदृश्य पृ.40

35. चंचल चौहान : 'नया पथ' दिसम्बर 1988 पृ.11

36. वेदप्रकाश अमिताभ : हिन्दी कहानी का समकालीन परिदृश्य पृ. 60

37.रामचन्द्र तिवारी : हिन्दी का गद्य साहित्य पृ.३34